मज़हब के नाम पर घृणा से मुक्त हो कश्मीरी

धारा 370-35ए के संवैधानिक क्षरण से जम्मू-कश्मीर में परिवर्तन की बयार बह रही है। इसी कड़ी में गत दिनों दो अभूतपूर्व घटनाएं सामने आई। इसमें पहली— तीन दशक बाद घाटी में बड़े पर्दे पर सिनेमा की वापसी है, जिसके अंतर्गत उपराज्यपाल मनोज सिन्हा ने 18 सितंबर को शोपियां और पुलवामा में सिनेमाघरों, तो 20 सितंबर को सोनमर्ग स्थित कश्मीर के पहले 'मल्टीप्लेक्स' का उद्घाटन किया। दूसरा मामला— जम्मू-कश्मीर के अंतिम हिंदू शासक और स्वतंत्र भारत के साथ विलय करने वाले महाराजा हरि सिंह की जयंती (23 सितंबर) पर प्रत्येकवर्ष सार्वजनिक अवकाश की घोषणा से संबंधित है। आखिर इनका निहितार्थ क्या है?

यह घटनाक्रम उस जीवंत बहुलतावाद-पंथनिरपेक्षता जीवनमूल्यों को क्षेत्र में पुनर्स्थापित करने की दिशा में एक और मजबूत प्रयास है, जिसे सांप्रदायिक शेख अब्दुल्ला द्वारा प्रतिपादित मजहबी राजनीति ने ध्वस्त कर दिया था। 'काफिर-कुफ्र' चिंतन प्रेरित भयावह हिंसा, हिंदू नरसंहार और उनके विवशपूर्ण सामूहिक पलायन, सिनेमाघरों पर तालाबंदी, सुरक्षाबलों पर पथराव आदि— शेख प्रदत्त वैचारिक दर्शन के ही विषाक्त फल थे। इस दिशा में जम्मू-कश्मीर प्रशासन द्वारा पहले शेख अब्दुल्ला की जयंती और 13 जुलाई के तथाकथित 'कश्मीर शहीदी दिवस' पर राजकीय अवकाश को निरस्त करके महाराजा हरि सिंह की जयंती पर सार्वजनिक छुट्टी की घोषणा एक और भूल-सुधार है।

महाराजा हरि सिंह निष्पक्ष, उदार और पंथनिरपेक्ष थे, जो उनकी नीतियों और व्यवस्था में भी परिलक्षित था। उन्होंने वर्ष 1925 को जम्मू-कश्मीर का राजकाज संभालते हुए कहा था, "मैं जन्म से हिंदू हूं... मेरा एकमात्र धर्म न्याय है और मैं उसी के अनुसार शासन करुंगा"। कालांतर में उन्होंने उद्घोषणा करते हुए कहा, "जम्मू-कश्मीर रियासत के हर व्यक्ति को अपने मजहब का पालन करने की स्वतंत्रता है। किसी भी विशेष समुदाय या श्रेणी के व्यक्ति को सरकारी पदों पर अनुचित लाभ नहीं दिया जाएगा।" अपनी देशभक्ति के कारण महाराजा अंग्रेजों की आंखों में चुभने भी लगे थे।

घाटी में स्थिति तब बिगड़ी, जब 1931 में शेख अब्दुल्ला जिहादी की भट्टी अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से तपकर घाटी पहुंचे और महाराजा हरि सिंह को 'सामंतवादी', 'निरंकुश' और 'मुस्लिम-विरोधी' बताकर उनके खिलाफ मोर्चा खोल दिया। यह स्थिति तब थी, जब अपनी आत्मकथा 'आतिश-ए-चिनार' में स्वयं शेख ने महाराजा हरि सिंह को मजहबी विद्वेष से ऊपर बताया था। उस समय रियासती सेना में हिंदू और सिखों के साथ बड़ी संख्या मुसलमान भी भर्ती थे। यह अलग बात है कि अक्टूबर 1947 के पाकिस्तानी हमले में रियासती मुस्लिम सैनिकों (अधिकारी सहित) का अधिकांश हिस्सा शस्त्रागारों

को लूटकर और गैर-मुस्लिम उच्च-अधिकारियों (लेफ्टिनेंट कर्नल नारायण सिंह सहित) की हत्या करके इस्लाम के नाम पर शत्रुओं से जा मिला था।

वास्तव में, महाराजा हरि सिंह के खिलाफ मिथक-झूठा विमर्श, आधुनिक कश्मीर के खूनी इस्लामीकरण को छद्म-सेकुलरवाद से छिपाने का प्रयास है, जो आज भी वामपंथियों के साथ गांधी-अब्दुल्ला-मुफ्ती आदि वंशवादियों द्वारा जारी है। इस संबंध में जुलाई 1931 के उस घटनाक्रम का उल्लेख करना आवश्यक है, जिसमें उन्मादी सभा का आयोजन करके 'काफिर' महाराजा हरि सिंह के खिलाफ 'जिहाद' और प्रतिबंधित गौहत्या करने हेतु मुसलमानों को उकसाया गया था। इस मामले में जब गिरफ्तार आरोपियों को 13 जुलाई को अदालत में प्रस्तुत किया गया, तब हजारों जिहादिदियों की भीड़ ने भीतर घुसने के प्रयास में आगजनी सहित रियासती पुलिस पर मजहबी नारे लगाकर हमला कर दिया। स्थिति अनियंत्रित होने पर जवाबी कार्रवाई में पुलिस को गोलियां चलानी पड़ी, जिसमें कई हिंसक प्रदर्शनकारी मारे गए। सोचिए, इसी हिंदू-विरोधी जिहादी उपक्रम को दशकों तक जम्मू-कश्मीर में 'शहीदी दिवस' के रूप मनाया गया। इसी घटना के बाद इस्लाम के नाम पर कई हिंदुओं को मौत के घाट उतारा गया, उनका मतांतरण किया, दुकानें फूंकी, संपत्ति लूटी, उनकी महिलाओं का यौन-शोषण किया और पवित्र हिंदू-सिख ग्रंथों अपमान करके देवी-देवताओं की प्रतिमाओं को खंडित कर दिया। यही जिहाद 60 वर्ष बाद घाटी में फिर दोहराया गया।

वर्ष 1930-40 दशक में घाटी स्थित हिंदू विरोधी वातावरण बनाने में जिन इस्लामियों ने सक्रिय भूमिका निभाई, उसमें शेख अब्दुल्ला अग्रणी थे। इस दौरान उन्होंने जहां नेशनल कॉन्फ्रेंस की नींव रखी, तो कई बार अपनी देशविरोधी गतिविधियों के कारण हिरासत में भी लिए गए। शेख को तब अपने परम-मित्र पं.नेहरू का सहयोग प्राप्त था। नेहरू का भ्रम वर्ष 1953 में जाकर टूटा और शेख गिरफ्तार कर लिए गए, किंतु तब तक बहुत देर हो चुकी थी। रही सही कमी कांग्रेस नेतृत्व ने पूरी कर दी, जिन्होंने नेहरू के अनुभवों से सबक नहीं लिया। वर्ष 1974-75 का इंदिरा-शेख समझौता— इसका एक प्रमाण है।

अक्सर, शेख अब्दुल्ला को उनके समर्थक 'शेर-ए-कश्मीर' कहकर संबोधित करते है। सच्चाई यह है कि जहां शेख मजहबी वातावरण मिलने पर विषवमन करते, तो प्रतिकूल स्थिति में भीगी बिल्ली बन जाते थे। यह 26 सितंबर 1947 को शेख द्वारा महाराजा हरि सिंह को लिखे माफीनामा से स्पष्ट है। तब उन्होंने महाराजा और उनके राजवंश के प्रति निष्ठावान रहने की कसमें खाकर लिखा था— "...मैं महामहिम को स्वयं और अपने संगठन की ओर से पूर्ण और वफादार समर्थन का आश्वासन देता हूं... यही नहीं, यदि कोई भी... हमारे लक्ष्य प्राप्ति के प्रयासों में बाधा डालता है, तो वह हमारा शत्रु माना जाएगा... मैं प्रार्थना करता हूं कि महामहिम के नेतृत्व में देश में भगवान शांति, समृद्धि... लाए।" परंतु जम्मू-कश्मीर का भारत में विलय होते ही विश्वासघाती शेख ने पं.नेहरू की सहायता से देशभक्त महाराजा हरि सिंह को उनकी रियासत से 'देशनिकाला' कर दिया।

इस पृष्ठभूमि में महाराजा हरि सिंह की जयंती पर राजकीय अवकाश की घोषणा, उनके साथ हुए घोर अन्याय का परिमार्जन है। इसके लिए मोदी सरकार और उप-राज्यपाल मनोज सिन्हा को बहुत-बहुत साधुवाद। सात दशकों के छद्म-सेकुलरवाद ने जिस प्रकार घाटी को शत-प्रतिशत हिंदू और सिख विहीन कर दिया, जिसमें लोगों ने दशकों तक सुरक्षाबलों पर पत्थर, तो जिहादियों पर फूल बरसाए— आज

उसमें परिवर्तन प्रत्यक्ष है। अब यह स्थिति स्थायी रहे, उसके लिए आवश्यक है कि वहां लोगों के हृद्य से मजहब के नाम पर 'काफिरों' के खिलाफ जो घृणा दबी है, उससे वे मुक्त हो जाए।

लेखक वरिष्ठ स्तंभकार, पूर्व राज्यसभा सांसद और भारतीय जनता पार्टी के पूर्व राष्ट्रीय-उपाध्यक्ष हैं।
संपर्क:- punjbalbir@gmail.com

साभार – https://www.punjabkesari.in/ से